साक्षात्कार : हबीब तनवीर पर विशेष

-ऋतु रानी
पी-एच.डी. (शोधार्थी), हिंदी एवं भारतीय भाषा विभाग, हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, महेंद्रगढ़
https://sahityacinemasetu.com/interview-habib-tanveer-par-vishesh/

रंजीत कपूर थियेटर एवं फ़िल्मी दुनिया के प्रसिद्ध लेखक एवं निर्देशक हैं। इन्होंने 1973-76 के बीच राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय से निर्देशन का कोर्स किया और उसके बाद NSD Repertory Co. से जुड़े रहे। 70 का यही वो दशक है जब रंजीत जी पहली बार हबीब तनवीर से परिचित होते हैं। इन्होंने उनके के साथ काम भी किया है। बाद में रंजीत जी एक फ्रीलांसर लेखक और निर्देशक के तौर पर थियेटर और टेलीविजन पर काम करते रहे। बिच्छू, शेर-अफगान, बेगम का तकिया, मुख्य मंत्री, एक रुका हुआ फैसला, एक घोड़ा छह सवार, खूबसूरत बहु, चेखव की दुनिया, हम रहे ना तुम जैसे नाटकों ने उनके निर्देशन में देशव्यापी ख्याति पायी। वहीं 80 के दशक के शुरुआत से ही इनका जुड़ाव फिल्मों से भी हुआ। कभी हाँ कभी ना, हम तो मोहबत करेगा, लज्जा, भगत सिंह, मंगल पाण्डेय, हल्ला-बोल, चिंटू जी, जो हो डेमोक्रेसी जैसी फिल्मों में उनके हुनर को देखा जा सकता है। यह बातचीत इसीलिए भी महत्वपूर्ण है कि आज जब हबीब तनवीर हमारे बीच नहीं हैं, ऐसे में रंजीत कपूर जैसे कलाकार ही (जिन्होंने उनके काम जो देखा और समझा) उनके सम्बन्ध में अभूतपूर्व जानकारी के स्रोत हैं। 8 जून, 2009 को हबीब जी इस दुनिया से विदा हो गये, लेकिन भारतीय रंगकर्म में उनके योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। अतः प्रस्तुत साक्षात्कार हबीब तनवीर के साथ रंजीत कपूर के अनुभवों पर केन्द्रित है, जिसे मैं 'साहित्य सिनेमा सेतु' के माध्यम से हबीब तनवीर की याद में समर्पित करती हूँ।

प्रश्न: हबीब तनवीर से आपका परिचय किस तरह हुआ?

रं.क.– मैं 1973 में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय में आया। उस समय गर्मियों की एक महीने की छुट्टियाँ हुई थी। सब लोग अपने-अपने घर चले गयें थे, लेकिन मैं नहीं गया था। मेरा एक दोस्त था वो हबीब साहब से परिचित था, तो ऐसे ही उसने बात की कि वे पूछ रहे थे कि कोई अच्छा अभिनेताहो तो बताओ। तुम मिलना चाहोंगे। मैंने नाम सुना ही हुआ था। मैंने कहा हाँ, चलो। मैं गया उनके पास। पांच मिनट के बाद ही उन्होंने कह दिया कि तुम काम करो इसमें। मुझसे कहा कि मेरा उर्दू का उच्चारण बहुत अच्छा है। इस तरह से मेरा उनके साथ पहला परिचय हुआ और मेरे जाते के साथ ही काम भी शुरू हो गया क्योंकि एक महीने की छुट्टियाँ थी।

'आगरा बाजार' की रिहर्सल और बीच-बीच में भी प्रस्तुति के दौरान हमने पूरा एक महीना हरियाणा की यात्राकी। कभी-कभी हबीब साहब मुझे साथ ले जाते थे कार में। तब मेरी पत्नी भी आ गई थी उन दिनों। उनकी पत्नी मोनिका जी और मेरी पत्नी में अच्छा परिचय हो गया था। उस वक्त उनकी बेटी नगीन छोटी थी। हम लोग जहाँ नाटकहोता साथ निकलते थे। फिर वहां से उठते और दूसरे प्रदर्शनके लिए निकल जाते, इस तरह से एक महीना हम लोग साथ रहें। उन्हीं दिनों कभी-कभी रात में चाय पीते, बातें होती। मैंने काफी कुछ सीखा उनसे। उसके बाद फिर मिलना-जुलना होता ही रहा हमारा।

प्रश्न : उनके साथ काम करने के आप के कोई खास अनुभव?

रं.क. 'आगरा बाजार' में सबसे पहले काम किया था। फिर 1977 में भी उनके साथ काम किया। वे मुझे बहुत उत्साहित करते थे। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय से निकालने के बाद मैं रिपर्टरी में आया। यहाँ मैंने 'बेगम का तकिया' किया। मैंने उनसे जो सीखा था वो काम आया इसमें। उनके नाटक 'सूत्रधार 77' में मैं कैसे आया, यह रोचक है। मैं राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय से पास कर चूका था और काम की तलाश थी। थोडा बहुत इधर–उधर मिला भी। एक दिन अचानक मेरे घर से एक तार आया कि मेरे बेटे की तबीयत खराब है और पैसे की जरूरत थी। अब मेरे पास पैसे नहीं थे। मैं तुरंत भागा। रिपर्टरी में उस वक्त मेरे दोस्त थे कि उनसे किसी से उधार मांगता हूँ। एक दो से पूछा भी पर किसी के पास नहीं थे। मैं परेशान। फिर थोड़ी देर बाद थर्ड फ्लोर से निकालने के लिए मैं लिफ्ट की तरफ गया और जैसे ही लिफ्ट का दरवाजा खुला हबीब साहब सामने थे। वे बोले- अरे! मैं तुम्हीं को ढूंढ रहा था। एक नाटक कर रहा हूँ और तुमको उसमें काम करना है। मैंने कहाँ- सर मैं करूँगा, लेकिन पहले मुझे एडवांस दे दो आप। हबीब साहब बोले- अरे! यह क्या मजाक है? मैंने कहा मुझे इसकी जरूरत है। उनको वो तार दिखाया। फिर बोले अच्छा ठीक है। उनके पास पर्स था, लेकिन उसमें थोड़े ही पैसे थे तो उन्होंने कहा ऐसा करो कि मेरे साथ घर चलो। उस दिन छुट्टी थी तो बैंक बंद थे। मैं उनके साथ घर चला गया। वहां उन्होंने चेंज ढूंढा और ऐसे करके 95 की मुझे चेंज दी। फिर पूछा कब तक आ जाओगे। मैंने कहा तीन-चार दिन में और तुरंत ट्रेन के लिए भागा। मैं टाइम से वापस भी आ गया था। जुबान दिया हुआ था तो आना ही था। जिस दिन सुबह पहुंचा उसी शाम को उनके यहां चला गया। देखा, रिहर्सल हो रही थी।

अब मुझे यह बाद में पता चला कि यह काफी दिनों से चल रही थी। मैं ही बहुत देर से उसमें शामिल हुआ हूँ। काफी सारे लोगों को तो अपने किरदार याद भी हो गए थे। खैर, मैं भी पहुंचा। अब नाटक की रीडिंग शुरू हुई और मुझसे कहा कि तुम संजोग (एक पात्र का नाम) पढ़ो। मैंने सोचा कि ठीक है पढ़ते हैं, पढ़ते-पढ़ते पता चला कि यह एक मुख्य पात्र है। ब्रेक के बाद फिर उन्होंने कहा कि तुम ही जारी रखो संजोग। अरे! फिर वही, मैंने सोचा अभी बस अर्जेस्ट करो जब तक कि कास्टिंगनहीं होती। उन्होंने दूसरे दिन भी कहा संजोग पढ़ो। तब मेरे कान खड़े हो गए। उसमें मेरे एक सीनियर थे इरफ़ान असकली, अब जिन्दा नहीं रहे। बड़ी बुलंद आवाज होती थी उनकी। एक बेहतर अभिनेता। मैंने उनसे धीरे से पूछा कि असकली साहब यह संजोग कौन कर रहा है। 'आप कर रहे हैं और कौन कर रहा है' ये सुनते ही मेरे पैरों के नीचे से जमीन निकल गई क्योंकि मैं अभिनय से बहुत दूर भागता था। एन.एस.डी. में भी जब था तो छोटे- मोटे रोल ही अधिक किये थे। लेकिन यह एक रियलिस्टिक प्ले था। इसमें मैं जैसा हूँ उनको वैसा ही चाहिए था। बड़ी मुश्किन में था मैं। अब जब बीच में फिर ब्रेक आया तो मैंने हबीब साहब से कहा– साहब मेरे जीवन में यह पहली मुख्य भूमिका है। कैसे होगा? मैं नहीं कर सकता। नहीं नहीं आप ही कर रहे हैं। बाद में तो बेतकुलफ़ हो गए थे कि नहीं, तुम ही करोंगे।

अच्छा, अब मुझे बाद में पता चला कि ये जो संजोग का रोल है उसे पहले राज बब्बर कर रहे थे। लेकिन वे जब किसी दूसरे नाटक में काम कर रहे थे तो स्टेज के ऊपर उनका पैर फिसल गया। अब उनको प्लास्टर लगा हुआ था। राज बब्बर एक साल सीनियर थे मुझसे और हम लोगों ने कई सालों तक साथ काम किया हुआ था। लेकिन क्या है ना कि उन्होंने अभिनय में डिप्लोमा किया था और मैंने निर्देशन के क्षेत्र में। अब जब यह रोल मुझे मिला तो मैं अन्दर से और डरा हुआ। मैं झटपटाता रहता कि क्या करू। जैसे की एक बच्चा सोचता है कि आज बारिश हो जाए तो स्कूल न जाना पड़े, किसी कि मौत हो जाए वगैरह- वगैरह,

ठीक वैसे ही मेरे दिमाग में चलता रहता। मैं सिर्फ खड़ा हो कर पढ़ रहा हूँ। याद ही नहीं हो रहा और कोई बात भी नहीं अभिनय में। दूसरी तरफ हबीब साहब भी मुझे टोक नहीं रहे थे। होता है न कि डांट दें, कुछ कहे क्योंकि मैं कुछ भी नहीं कर रहा था। खैर,अब आया शो का समय। इ.टी.ओ. के पास पहला शो हुआ था। मेरी हालत खराब। उस दिन सबसे ज्यादा दिल ये करे कि कुछ ऐसा हो जाए कि नाटक ना हो। अब फर्स्ट बेल हो गई और मैं विंग में खड़ा हुआ है। थोड़ी देर बाद ही मेरी एंट्री थी नागरा बब्बर जी साथ। कसम से उस वक्त मेरे हाथ पैर कपने लगे क्योंकि मैं अभिनेता नहीं हूँ न। और उस वक्त तो था ही नहीं।

हबीब साहब उस विंग में और मैं इस विंग में। पीछे से जाने का रास्ता बना हुआ था। मैं पीछे के रस्ते से होता हुआ हबीब साहब से मिला। वहां पास में ही एक लकड़ी का टुकड़ा पड़ा हुआ था। मैंने उसे ऐसे ही उठा लिया। वो कहते हैं न कि डूबते को तिनके का सहारा, बस वैसे ही था। मैंने पूछा मैं एंट्री में इस लकड़ी को साथ ले जाऊ तो बोले हाँ ले जाओ। अब मेरी एंट्री हुई मैंने क्या किया है ना दिन उस छड़ी से, कैसे-कैसे इस्तेमाल किया उसका पूरे प्ले में बता नहीं सकता। लाफ्टर ही लाफ्टर। छोटी- छोटी चीजों पर तालियाँ। मैं सब इम्प्रोवाईज कर रहा हूँ। अरे बाप रे बाप सब हक्के-बक्के रह गए। मैं खुद हक्का-बक्का रह गया कि यह क्या किया मैंने। नाटक खत्म हुआ। राज बब्बर थोड़े ठीक हो गए थे तो वे भी आए हुए थे देखने। राज ने आकर मुझे गले लगा लिया कि यार तूने कमाल कर दिया। मैं भी नहीं कर सकता था यह सब। मेरे अभिनय को देख कर यह मान लिया गया की रंजीत एक अभिनेता भी है।

फिर काफी दिनों के बाद इसका एक शो और हुआ। उस वक्त में एन.एस.डी. में किसी काम में व्यस्त था। तब तक मैं इसके काफी शो चूका था। मुझे कहा गया कि तुम रिहर्सल देख लेना। लेकिन मैं देख नहीं पाया, फसा हुआ था काम में। पर हबीब साहब को यह तसली थी मुझे इतना सब याद है तो कुछ दिक्कत नहीं होगी। अब नाटक में एक दृश्य ऐसा भी था जिसमें एक दो गुण्डे हैं जो मुझे पकड़ते है और पीटते हैं। तब मैं गिर जाता हूँ और वे चलते-चलते कहते हैं कि जा रहे हैं फिर देखते हैं तुमको। नमस्ते। मैं भी उल्टा पड़ा हुआ ही पीछे पैर जोड़ कर नमस्ते पैर से करता तो उसमें में भी लाफ्टर आते।

अब काफी समय बाद नाटक का शो हो रहा था और मैं ठीक दस मिनट पहले पहुंचा। मुझे यह मालूम ही नहीं कि गुण्डे का जो रोल उनके छत्तीसगढ़ी कलाकार करते थे, वे इस बार वे बदल गए हैं। बीच में कुछ अभिनेता की समस्या हुई होगी तो उनकी जगह हरयाणवी लोग आ गये थे। उनके साथ मेरी रिहर्सल हुई नहीं थी। अब जब वो दृश्य आया तो भाई सचमुच में इतना मारा की आखों के आगे अँधेरा छा गया और मैं गिर पड़ा। मेरी उठने की हिम्मत नहीं हो रही थी इतना ज़ोर से मारा उन्होंने। और अभी स्टेज पर मेरे उठने में थोडा समय था तो इसी बीच बेहोशी से कुछ सेकंड पहले ही मैंने देखा कि हबीब साहब ने समझ लिया कि कुछ गड़बड़ हुई है। वे तुरंत दौड़कर पीछे आये। तब कुछ क्लू वगैरह मिला। फिर मुझे होश आया। मैं बहुत मुश्किल से उठा और किसी तरह से विंग में पहुंचा। वे गुण्डे भी समझ गए कि गड़बड़ हो गई, सच में मार दिया। खैर, नाटक ख़त्म हुआ। सबको मालूम था की चोट लगी है और वे दोनों हरयाणवी जो गुण्डे बने थे, बहुत बड़ा गर्म दूध का कुल्हड़ मेरे लिए लेकर आयें। माफ़ी भी मांगने लगे। मैंने कहा गलती आप की नहीं है, मेरी है। मुझे रिहर्सल में आना चाहिए था। मुझे पता नहीं था कि अभिनेता बदल गए हैं। इस तरह उनके साथ काम करने के अनुभव रहे मेरे। सीखने को बहुत मिला। बाद में तो वे मेरे नाटक देखने भी आते रहे। हबीब साहब कहते थे कि रंजीत तुम्हारे नाटक में एक बात जरुर है कि तुम एन्जॉय करते हो। बहुत पसंद आया उन्हें मेरा काम।

प्रश्न : हबीब तनवीर एक साथ नाटककार, निर्देशक और शायर के रूप में हमारे सामने आते हैं। आप को उनका कौन सा रूप ज्यादा पसंद था?

रं.क. मुझे सबसे ज्यादा पसंद थे पोएट्री में या भाषा में। मैंने उनसे जो सबसे बड़ी चीज सीखी जब मैं 'सूत्रधार 74' में काम कर लिया था। मैंने अपने दोस्तों से यह बात कही हुई थी कि मैं हबीब साहब के सातः काम का चूका हूँ तो मैंने देखा कि हबीब साहब में कुछ खुबियां है जो अल्काजी में नहीं है और अल्काजी की कुछ खूबियाँ हबीब साहब में नही हैं। दोनों मेरे गुरु हैं। मैंने कहा कि मेरी यह कोशिश होगी की अगले 10 सालों में मैं इन दोनों की खूबियों को एक जगह दिखाऊ। मेरे दोस्तों को यह बात याद थी। अब जब मैंने 77 में 'बेगम का तकिया' किया तो इसे देखने के बाद मेरे दोस्त बोले कि तुमने जो 10 साल वाली बात कही थी कि दोनों की खूबियों को दिखाऊँगा, यह कमाल तो तुमने अभी ही दिखा दिया। सिर्फ तीन साल के अन्दर ही कर दिखाया। जो तकनीकी फिनिशिंग, दृश्यहै वो अल्काजी का है और जो भाषा है, गाने हैं वो हबीब साहब का।

'सूत्रधार 77' में मैंने गाने भी लिखें। देखो, क्या होता है कि अगर फोक कोई लिखा रहा है तो वो पकड़ी जाती है। जैसे किसी मॉडल को एक गाँव की लड़की के रूप में दिखाये कि वो खड़ी है मटका या पुआल आदि लेकर तो सब पता चल जाता है कि यह मॉडल है और भ्रम पैदा कर रही है गाँव की लड़की का। चोरी पकड़ी जाती है। इसी तरह से गाने भी हैं, संगीत भी है। हबीब साहब की एक खास यह बात थी कि जो धुन नाटक में होती थी वो शुद्ध छत्तीसगढ़ी। पूरी तरफ फोक है। इसमें कोई मिलावट नहीं है और जब उसमें लिखते तो जो ख्याल होता है यानि कंटेंट वो आज का। यह कमाल था उनकी सोच का। अब उस नाटक में एक गाना था **'दुनिया में बड़े–बड़े चोरु है भईया और कोनो ढंग नहीं है ना....'** इसमें जो चीज पकड़ी कि धुन तो है ही फोक, साथ ही शब्द भी है। लेकिन इसमें जो ख्याल है, कंटेंट है वो आज का है। यह सब सीखा मैं हबीब साहब से।

अब मैंने 'बेगम का तकिया' किया। उस नाटक के बाद इस नाटक के गाने भी मैंने खुद लिखें। फर्क यह था कि उसमें धुनें छत्तीसगढ़ की थी और यहां मैंने हरियाणा की ली थी। मेरे सामने आदर्श था उनका। पर नकल नहीं की मैंने। अब इसमें कुछ अच्छे भी गाने थे जैसे यह **'बनिये की छोरी ने तो लुटा बगदाद मेरा, खुशियों का टोटा हो गया मंदा बाजार मेरा'।** इसमें एक और प्रमुख गाना था **'थोड़े दिनों में बहुत दूर तक हमने खूब जमाना देखा, ऊपर से तो मीठे बोले नस-नस में बेईमाना देखा'** तो बहुत प्रसिद्ध हुए ये गीत, पर नकल नहीं है उनके गाने की। धुनें फोक हैं, बोल में यह लग रहा कि फोक है, लेकिन उसके पीछे जो चीज है यानी कंटेंट (जो मै कहना चाह रहा हूँ) वो आज का है। समकालीन है। जब हबीब साहब ने इसे देखा तो बहुत खुश हुए। वे मुझ पर गर्व करते थे की मैं उनका शार्गिद हूँ। मुझे बहुत प्यार करते थे। सम्मान भी करते थे कि रंजीत एक अच्छा निर्देशक है। कहने का मतलब है कि मेरी जो भाषा, संगीत, शब्द में पकड़ आई वो हबीब साहब की देन है। अपने पहले गुरु जी अल्काजी साहब से भी बहुत सीखने को मिला मुझे।

प्रश्न : हबीब तनवीर ने नाटक और फिल्म दोनों में अभिनय किया है तो बतौर एक फिल्म अभिनेता आप हबीब जी को कैसे देखते है ?

रं.क. देखो, अब मैंने उनकी फिल्म का कोई परफोर्मेंस नहीं देखा और अगर देखा भी होगा तो मुझे याद नहीं है अभी। इस बारे में मैं कुछ कह नहीं सकता, लेकिन मंच पर देखा है उन्हें। सूत्रधार में वे कोई

भूमिका में नहीं थे। लेकिन 'आगरा बाजार' में पतंगवाले की भूमिका करते थे। बहुत अच्छे से करते थे। वो जो पुराना स्टाइल है जुबान का तो सचमुच एक पतंग वाले ही लगते थे। एक अच्छे अभिनेता थे हबीब साहब।

प्रश्न : 'आगरा बाजार' में उनके साथ आपके अनुभव कैसे थे?

रं.क. 'आगरा बाजार' उस वक्त एक नए किस्म का नाटक था और उसमे मैं क़ुतुबफरोश करता था। मेरा उर्दू का उच्चारण अच्छा था ही। आपको बताया भी अभी-अभी। मुझे बहुत खुराट किस्म का रोल मिला था। उसमें दाढ़ी लगता था मैं तो ये सब मुझे मेरे वास्तविक चरित्र से से छिपा लेती और मुझे थोडा विश्वास मिलता। इसीलिए संजोग के रोल में परेशानी हुई मुझे करने में कि मैं जैसा हूँ वैसा ही दिखना है। 'आगरा बाजार' में वेशभूषा ऐसी थी कि मैं एक कैरेक्टर हो गया। वह एक खुराट किस्म का आदमी है जो दुकान पर आकर बैठता है। वो रोल मैंने बहुत एन्जॉय किया। लेकिन एक नाटककार के रूप में हबीब साहब को देखू तो उनका जो सबसे बड़ा कमाल था कि पूरे नाटक में नज़ीर कहीं नजर नहीं आते हैं। फिर भी मंच पर नज़ीर ही नज़ीर है अपनी कविताओं के माध्यम से। यह प्रस्तुत करने की उनकी ख़ूबी मुझे अच्छी लगी।

प्रश्न : रंग निर्देशक के रूप में आप काफी जाने जाते हैं, लेकिन फ़िल्मी दुनिया का सफर भी कम नहीं रहा। इस सफर में कामयाबी के आपके क्या अनुभव रहे?

रं.क. देखो, मैंने सिनेमा में कोई उच्चाई हासिल नहीं की है। अब मैं यह नहीं कहूँगा कि देश के लिए मैंने अपना परिवार छोड़ दिया हो या इसी तरह का कुछ भी मैंने नहीं किया। थिएटर में मेरा गुजरा नहीं था। जब तक कोई मौका नहीं मिला तो कर रहे थे। अभी कर रहा हूँ। लेकिन जब मुझे लिखने का अवसर मिला तो किया। बस ऐसे ही करता रहा। कुछ पैसे भी मिलते रहे तो सोचा यही कर लेता हूँ। पर मैंने कभी कोई खास प्रयास नहीं किये सिनेमा में स्थापित होने के लिए। मेरे जीवन में जो भी आता गया करता गया। इसमें बस इतना था जो मेरे पसंद की होती थी उसे कर लिया, नहीं तो नहीं किया।

अब ऐसा भी नहीं की मैं भाग्यवादी हूँ। नास्तिक था हमेशा। लेकिन जो ज्योतिषी है उसमें बहुत विश्वास करने लगा, खास तौर से 1999 से। उस वक्त ऐसे हालात हुए की मैं पहले मानता ही नहीं था और दूसरों का मजाक भी उड़ाता था। तब कुछ ऐसा हुआ कि किसी ने मेरे बारे में कुछ भविष्यवाणी की। बाद में देखा कि जो कुछ उसने कहा था सब धीरे धीरे होता चला गया। मैं हैरान था। फिर यही समझ में आया कि अगर कुंडली में लिखा है तो होता ही होगा अवश्य। खैर, मैं अपने आपको कभी श्रेय नहीं देता हूँ कि जी हाँ, मैं यहां पहुँच गया हूँ। बस मैं यह एक चीज आपके साथ शेयर कर सकता हूँ कि मैं अपनी सीमाएं पहचानता हूँ और मुझे कोई गलतफेमी नहीं है अपने बारे में।

मैं पढ़ने का बहुत शौक़ीन हूँ। ज्ञान पिपासा जिसे कहते है ना बस वही है। नाटक पढता हूँ फ़िल्में देखता हूँ। सीखता हूँ आज भी। बस यही है कि मैं कुछ नहीं हूँ। कहीं नहीं पहुंचा हूँ। अभी भी संघर्ष कर रहा हूँ। संघर्षमयी का मतलब ही है आदमी जो चीज जीवन में पाना चाहता हो वो अभी प्राप्त नहीं हुई हो तो बस मैंने कुछ प्राप्त नहीं किया। लगा हुआ हँ अभी भी।